THE TIMES OF INDIA

Date:13-03-20

Heart Of Darkness

Poachers kill rare white giraffes, compounding a global health and environment challenge

TOI Editorials

The sighting of a white giraffe and her calf made headlines across the continents in 2017. Even now, videos of these noble long-necked and long-legged creatures peaceably ambling in Kenyan flora give new meaning to the phrase 'she walks in beauty'. Last year the mother brought another pale baby giraffe into the world. Now the family is down to one. Poachers have killed the eldest and youngest.

Illegal wildlife trade is estimated to be the fourth largest illegal activity globally – after drugs, people smuggling and counterfeiting. It is a big contributor to the collapsing biodiversity that scientists are calling Earth's sixth mass extinction. Less biodiverse forests are more vulnerable to climate disturbances too. As if all this was not reason enough to end poaching, the Covid-19 pandemic has served fresh evidence of the human health dangers of the global trade in wildlife. This is now a public safety issue. And the scale of the challenge should not be underestimated. Just a single shop in the Wuhan market that proved to be ground zero for the novel coronavirus, advertised the feet, blood, intestines and other body parts of over 70 species.

It will take people to save the animals. Experience in India and other countries has shown that the most upmarket interventions inside wildlife reserves are no substitute for the cooperation of communities around them. Local citizens need to be stakeholders in conservation. They need to have skin in the game. At the other end patterns of consumption need to change, even where they have deep traditional roots. On a discouraging note, while China has now banned trade in certain wildlife, what exotica can still be eaten appears to be a trending concern on social media. Are bullfrogs still available? How about bear paws?

दैनिक भास्कर

Date:13-03-20

नैतिक विपक्षियों पर ही प्रभावी हैं गांधी सिद्धांत

संपादकीय

हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के सबसे अहम कदम दांडी मार्च को 90 साल हो गए हैं। ब्रिटिश राज के खिलाफ महात्मा गांधी द्वारा शुरू किया गया यह सबसे सफल अवज्ञा आंदोलन था। ब्रिटिश शासन ने उस समय भारतीयों के नमक बनाने और बेचने पर प्रतिबंध व भारी कर लगा दिया था, जिससे लोग महंगा और विदेशी नमक लेने को मजबूर थे। इस नमक कर का विरोध तो 19वीं सदी में ही शुरू हो गया था, लेकिन 12 मार्च 1930 को गांधीजी द्वारा आंदोलन शुरू करने से ही सफलता हासिल हुई। गांधीजी ने साबरमती के अपने आश्रम से दांडी के लिए यात्रा शुरू की। 385 किलोमीटर की इस यात्रा में उनके साथ कई दर्जन अनुयायी भी शामिल थे। वे अपने हर पड़ाव पर लोगों को संबोधित करते थे और उनके साथ चलने वाले लोगों की संख्या बढ़ती जाती थी। वह 5 अप्रैल 1930 को समुद्र के किनारे दांडी पहुंचे और अगले दिन 6 अप्रैल को उन्होंने मुट्ठीभर नमक बनाकर प्रतिकात्मक रूप से कानून का उल्लंघन किया। यह नागरिक अवज्ञा का बहुत ही प्रभावी काम था।

इस नाटकीय घटनाक्रम ने देश और दुनिया का ध्यान खींचा। गांधीजी ने नमक कर के खिलाफ दो महीने तक आंदोलन किया और अन्य लोगों को भी नमक कानून तोड़ने के लिए उकसाया। हजारों लोगों को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया। मई में गांधीजी को भी गिरफ्तार किया गया। इससे दसियों हजार लोग इस आंदोलन में शामिल हो गए और 21 मई 1930 को करीब 2500 सत्याग्रहियों पर पुलिस ने लाठीचार्ज किया। साल खत्म होते-होते 60 हजार लोगों को जेलों में डाल दिया। बाद में ब्रिटिश शासन को अहसास हुआ कि दमन और जेल में डालने से कुछ लाभ नहीं है। जनवरी, 1931 में गांधीजी को रिहा कर दिया गया और लॉर्ड इरविन से वार्ता शुरू हुई। 5 मार्च 1931 को हुए गांधी-इरविन समझौते के बाद गांधीजी ने सत्याग्रह समाप्त कर दिया। उनकी नैतिक विजय हो चुकी थी।

गांधीजी के दांडी मार्च को याद करने की वजह यह है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस आज कई तरह से जवाहरलाल नेहरू के 15 अगस्त 1047 की मध्यरात्रि को दिए गए प्रसिद्ध भाषण 'नियति से साक्षात्कार' के शब्दों की प्रतिध्वनि कर रही है। तब उन्होंने महात्मा को 'भारत की भावना का अवतार' बताते हुए कहा था कि उनके संदेश को भावी पीढ़ियां याद रखेंगी। संदेश क्या था? महात्मा दुनिया के पहले सफल अहिंसा आंदोलन के अप्रतिम नेता थे। उनकी आत्मकथा थी 'सत्य के प्रयोग'। दुनिया की कोई भी डिक्शनरी सत्य के अर्थ को उतनी गहराई से परिभाषित नहीं करती, जितना गांधीजी ने किया। उनका सत्य उनके दृढ़ मत से निकला था। यानी यह केवल सटीक नहीं था, लेकिन यह न्यायपूर्ण था इसलिए सही था। सत्य को अन्यायपूर्ण या असत्य तरीकों से नहीं पाया जा सकता। यानी अपने विरोधियों के खिलाफ हिंसा करके। इसी तरीके को समझाने के लिए गांधीजी ने सत्याग्रह की खोज की। वह इसके लिए अंग्रेजी शब्द पैसिव रजिस्टेंस (निष्क्रिय विरोध) को नापसंद करते थे, क्योंकि सत्याग्रह के लिए निष्क्रियता नहीं, सक्रियता की जरूरत थी। अगर आप सत्य में

विश्वास करते हो और उसे पाने की परवाह करते हो तो गांधीजी कहते थे कि आप निष्क्रिय नहीं रह सकते, आपको सत्य के लिए दुख उठाने के लिए सक्रिय तौर पर तैयार रहना होगा। अहिंसा विपक्षी को चोट पहुंचाए बिना सत्य को साबित करने का तरीका था, बल्कि इसके लिए खुद चोट खाई जा सकती थी। गांधीजी ने स्वतंत्रता आंदोलन के लिए यह रास्ता चुना और यह प्रभावी रहा। दांडी तो सिर्फ इसका प्रतिमान था। जहां छिटपुट चरमपंथ और उदार संवैधानिकता दोनों ही निष्प्रभावी रहे, वहां गांधीजी स्वतंत्रता का मुद्दा लोगों तक ले गए। उन्होंने लोगों को वह तकनीक दी, जिसका अंग्रेजों के पास कोई जवाब नहीं था। हिंसा से दूर रहकर गांधीजी ने पहले ही बढ़त ले ली थी। अहिंसात्मक रूप से कानून को तोड़कर उन्होंने इसके अन्याय को भी दिखा दिया था। खुद पर लगाए गए दंडों को स्वीकार करके उन्होंने बंदी बनाने वालों का ही उनकी क्रूरता से सामना कराया। खुद पर ही भूख हड़ताल जैसे कष्ट थोपकर उन्होंने दिखाया कि वह सही वजह से की जा रही अवज्ञा के लिए किस हद तक जाने को तैयार हैं। अंत में उन्होंने अंग्रेजों के शासन को ही असंभव बना दिया।

आज के भारत में गांधीजी और दांडी से हमें क्या सीख मिलती है? एक चीज को समझना होगा कि गांधीजी का रास्ता उन्हीं विपक्षियों के खिलाफ काम करता है, जिन्हें नैतिक अधिकार खोने की चिंता होती है, एक सरकार जो घरेलू और अंतराष्ट्रीय राय के प्रति उत्तरदायी हो और हार पर शर्मसार होती हो। गांधीजी की अहिंसात्मक नागरिक अवज्ञा की ताकत यह कहने में निहित है : 'यह दिखाने के लिए कि आप गलत हैं, मैं खुद को दंडित करूंगा।' लेकिन इसका उन लोगों पर कोई असर नहीं होता, जो इस बात में इच्छुक ही नहीं हैं कि वे गलत हैं और पहले से ही अपने साथ असहमति की वजह से आपको दंडित करना चाहते हैं। आपके खुद को सजा देने की इच्छा तो उनके लिए विजय का सबसे आसान तरीका होगा। नैतिकता के बिना गांधीवाद वैसा ही है जैसे कि सर्वहारा वर्ग के बिना मार्क्सवाद। इसके बाद भी जिन लोगों ने यह तरीका अपनाया वह उनकी व्यक्तिगत ईमानदारी और नैतिकता है। जबरन हड़ताल, पाखंडी क्रमिक धरना और धरनों के दुरुपयोग से यही पता चलता है कि दुनिया गांधीजी के सत्य के विचार से कितना गिर गई है।

इससे गांधीजी की महानता कम नहीं हुई है। जब, दुनिया फासीवाद, हिंसा और युद्ध में बंट रही थी, महात्मा ने हमें सत्य, अहिंसा और शांति का मतलब सिखाया। उन्होंने ताकत का मुकाबला सिद्धांतों से करके उपनिवेशवाद की विश्वसनीयता खत्म कर दी। उन्होंने ऐसे व्यक्तिगत मानदंडों को हासिल किया, जिसकी बराबरी शायद ही कोई कर सके। वह एक ऐसे दुर्लभ नेता थे, जिनका दायरा समर्थकों तक सीमित नहीं था। उनके विचारों की मौलिकता और उनकी जिंदगी के उदाहरण आज भी दुनिया को प्रेरणा देते हैं। लेकिन, हमें आज भी गांधीजी से बहुत कुछ सीखने की जरूरत है।

Date:13-03-20

शिशु के पहले दो सालों में निवेश देश के लिए जरूरी

संपादकीय

विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनिसेफ और लांसेट की रिपोर्ट के मुताबिक भारत सहित दुनिया के तमाम देश इस बात को तरजीह नहीं दे रहे हैं कि जन्म के पहले दो सालों में नवजातों पर निवेश देश की खुशहाली का बड़ा कारण बन सकता है। लांसेट की ताजा रिपोर्ट के अनुसार अगर इन शिशुओं के पैदा होने के दो सालों में इनके पालन-पोषण पर समुचित ध्यान

दिया जाए तो उनका भावी जीवन उनकी सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक अक्षमताओं से बच सकता है। इससे गरीब-अमीर के बीच जन्मजात विभेद पर भी अंकुश पाया जा सकता है। आज दुनिया में 25 करोड़ ऐसे बच्चे हैं, जो पूर्ण विकास हासिल नहीं कर पाते। इनमें से बड़ी संख्या भारत के बच्चों की है। यहां आज भी हर पांचवां बच्चा गैर-प्रशिक्षित दाइयों द्वारा जना जाता है। रिपोर्ट के अनुसार भारत अपने बच्चों की खुशहाली और स्वास्थ्य के पैमाने पर दुनिया के 180 देशों में 131वें स्थान पर है। तथाकथित ग्रोथ और गरीबी हटाने के दिखावटी उपायों से पांच साल से कम उम्र के करोड़ों बच्चों के विकास को भारी ख़तरा है। अमेरिका की अंतरराष्ट्रीय विकास एजेंसी (यूएसएड) की रिपोर्ट के अनुसार मध्याह्न भोजन की योजना के कारण भारत के स्कूलों में बच्चे तो बढ़े हैं, लेकिन वे शिक्षार्जन शायद ही कर पा रहे हैं। इसका ताजा उदाहरण बिहार में देखने को मिला, जहां शिक्षकों की हड़ताल के कारण मध्याह्न भोजन बंद हुआ तो बच्चों की स्कूलों में उपस्थिति भी कम हो गई। रिपोर्ट कहती है कि उत्तर प्रदेश में चार में से तीन बच्चे ब्लैकबोर्ड पर लिखे दो संयुक्त मात्र शून्य अक्षरों को मौखिक रूप से पढ़ नहीं सकते। मौखिक रीडिंग प्रवाह (ओरल रीडिंग फ्लूएंसी) जानने के इस अध्ययन में बताया गया कि इसी वजह से इन बच्चों में बड़े होने पर भी शिक्षा ग्रहण करने की क्षमता का विकास नहीं होता है और वे पीछे रह जाते हैं। नतीजतन आगे की पढ़ाई बाधित हो जाती है। अगर वे किसी तरह डिग्री ले लेते हैं तो नौकरी की दौड़ में काफी पीछे रह जाते हैं। ग्रामीण भारत के बच्चे इसके सबसे ज्यादा शिकार होते हैं और आजीविका के लिए वे कृषि में ही ठहर जाते हैं, जिनसे दो वक्त की रोटी भी उपलब्ध नहीं हो पाती। लांसेट की सिफारिश है कि सरकारें अगर बच्चों की पैदाइश के दो साल तक निवेश करें तो गरीबी खत्म हो सकती है।

दैनिक जागरण

Date:13-03-20

दंगो से जुड़ा है आंतरिक सुरक्षा का सवाल

रिजवान अंसारी,

हाल ही में दिल्ली के उत्तर -पूर्वी हिस्से में फैले सांप्रदायिक हिंसा के कारण 53 से अधिक लोगों की जान चली गई। इस हिंसा और उपद्रव की चपेट में हजारों लोगों के आने से देश की राजधानी की व्यवस्था पूरी तरह चरमरा गई। इन सबसे बढ़ कर यह कि सांप्रदायिक दंगों में हुए करोड़ों रुपये की आर्थिक क्षति तो होती ही है, देश की आंतरिक सुरक्षा भी खतरे में पड़ जाती है। इन दंगों में नागरिकों द्वारा हथियारों का इस्तेमाल किया जाना बताता है कि देश की आंतरिक सुरक्षा किस कदर खतरे में है। यकीनन अवैध हथियारबंद लोगों के चलते नागरिकों के भय के माहौल में जीने से देश की एकता व अखंडता खतरे में पड़ जाती है। गौर करें तो आंतरिक सुरक्षा का मुद्दा लोगों की संपत्ति, मौलिक और मानव अधिकार, राष्ट्रीय सुरक्षा जैसे पहलुओं से भी जुड़ता है और सांप्रदायिक दंगे जैसी घटनाएं इन पहलुओं के लिए चुनौतियां बन कर उभर रही है। दरअसल सांप्रदायिक हिंसा को भड़काने वाले एवं उससे पीड़ित होने वाले दोनों ही पक्षों में देश के ही नागरिक शामिल होते हैं, ऐसे में इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। सांप्रदायिक दंगे युवाओं को राह से भटकाते हैं। नागरिकों में नसलवाद और आतंकवाद जैसी अवैध गतिविधियों के प्रति आकर्षित होने की आशंका में तीव्र वृद्धि देखने को मिलती है। कई राज्यों में नसलवाद कहें या फिर देश के अंदर आतंकी संगठनों के पैर पसारने की बात करें, कहीं न

कहीं ऐसे दंगे भी जिमेदार हैं। सोचिए कि अगर देश के युवा ऐसी गतिविधियों में संलिप्त होना प्रारंभ कर दें, तो देश की आंतरिक सुरक्षा को सुनिश्चित कर पाना कितना मुश्किल हो जाएगा। इसका एक पहलू यह भी है कि बारंबार तनाव की स्थिति पैदा होने से कानून एवं व्यवस्था के प्रति लोगों में अविश्वास की भावना का निर्माण होता है। हिंसात्मक घटनाओं को रोकने में नाकाम होने से प्रशासनिक व्यवस्था की विश्वसनीयता सवालों के घेरे में आती है। इससे एक बात पता चलती है कि देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए जो जरूरी कवायद होनी चाहिए, उसका अभाव है। इसमें कोई दो राय नहीं कि आजादी के बाद से ही भारत आंतरिक सुरक्षा के मोर्चे पर कई प्रकार की चुनौतियों से जूझ रहा है। इन चुनौतियों का समाधान कैसे हो? हिंसक घटनाओं की बड़ी वजह आंतरिक सुरक्षा के प्रबंधन में व्याप्त खामियां हैं। किसी भी समस्या के समाधान के लिए दीर्घकालिक नीतियां जरूरी है ताकि मूल कारणों पर काम करके समस्या का समाधान निकाला जा सके। इसी के साथ अल्पकालिक नीतियां भी बन जाती हैं जिससे तात्कालिक समस्याओं का निपटारा किया जाता है। लेकिन चिंता का विषय है कि भारत सरकार के पास ऐसी कोई मजबूत नीति नहीं है। सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए 2005 में तैयार किए गए सांप्रदायिक हिंसा (रोकथाम, नियंत्रण और पीड़ितों का पुनर्वास) विधेयक को कानूनी रूप नहीं दिया जा सका है। इसी तरह माओवादी हिंसा से निपटने के लिए भी भारत सरकार के पास कोई स्पष्ट नीति नहीं दिखाई पड़ती।

केंद्र सरकार ने नसलवाद को खत्म करने के लिए 'समाधान नामक आठ सूत्री पहल की घोषणा जरूर की है। इसके तहत नसलियों से लडऩे के लिए रणनीतियों पर जोर दिया गया है, पर अभी तक यह पता नहीं चल सका है कि यह कितना कारगर साबित हुआ है। एक खामी यह भी है कि हमारी सरकारें पुलिस सुधार की जरूरतों को नजरअंदाज कर रहीं हैं। हालिया दिल्ली दंगे में पुलिस कार्रवाई पर सवालिया निशान इसी का एक पहलू है। आधुनिक प्रशिक्षण के अभाव में पुलिस दंगाई से निपटने में सक्षम नहीं हो पाती।

कानून-व्यवस्था के मसले पर राज्य- केंद्र संबंधों में सशत भागीदारी का अभाव भी देखा जा रहा है। कानून- व्यवस्था राज्य का मसला है, पर कभी कभी मामले इतने ज्यादा गंभीर हो जाते हैं कि राज्य सरकार हालात पर काबू नहीं कर पाती। लिहाजा, केंद्र-राज्य संबंध की जड़ता भी आंतरिक सुरक्षा की राह में एक बड़ी खामी है। ऐसे में पुलिस व्यवस्था को राज्य सूची से बाहर कर समवर्ती सूची में शामिल करने की जरूरत है। इससे यह होगा कि समय-समय पर केंद्रीय स्तर पर पुलिस व्यवस्था की समीक्षा की जा सकेगी और आपातकालीन स्थिति में केंद्रीय बल मदद को तैयार रहेंगे। हमें आंतरिक सुरक्षा को भी उतनी ही अहमियत देने की जरूरत है जितनी कि बाह्य सुरक्षा को देते हैं। आंतरिक सुरक्षा को कम करके आंकना सुरक्षा के लिहाज से घातक सिद्ध हो सकता है। आंतरिक सुरक्षा कई बार चुनौती बनकर हमारे सामने खड़ी हो जाती है। इस कड़ी में यह नहीं भूलना चाहिए कि नफरती या भड़काऊ भाषण देने वाले नेतागण भी देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए उतने ही खतरनाक हैं जितने कि कोई अपराधी। ऐसे में बिना भेदभाव के इन नेताओं पर कार्रवाई आंतरिक सुरक्षा के लिए बेहद अहम कदम हो सकता है। आंतरिक सुरक्षा के लिए समेकित आंतरिक सुरक्षा नीति की भी जरूरत है जिसके तहत राज्य व केंद्र सरकार मिलकर देश की सुरक्षा सुनिश्चित कर सके। इससे इतर, वर्तमान आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार भी बड़ा उपाय है। समझना होगा कि मामलों के निपटाने में देरी से अपराधों में इजाफा होता है। ऐसे में जजों की पर्याप्त नियुति और फास्ट ट्रैक अदालतों की स्थापना महत्वपूर्ण है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:13-03-20

पारिस्थितिकी संकट का संकेत है कोविड-19

इस संकट को अलग-थलग मानकर उससे निपटने की योजना काम नहीं करेगी। इसके लिए समग्र दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है। इस बारे में बता रहे हैं

श्याम सरन, (पूर्व विदेश सचिव और सीपीआर में सीनियर फेलो हैं। 2007 से 2010 तक वह जलवायु परिवर्तन पर प्रधानमंत्री के विशेष दूत थे।)

कोरोनावायरस (कोविड-19) महामारी का पूरी दुनिया में प्रसार जारी है और यह पहले ही विकराल स्वास्थ्य संकट बन चुका है। अब इसने दुनिया की अर्थव्यवस्था पर भी असर डालना शुरू कर दिया है जिससे उत्पादन, यात्रा और व्यापार की व्यवस्थाएं तार-तार हो रही हैं। संभव है कि एक साल के भीतर इसका प्रभावी टीका विकसित किया जा सकता है लेकिन तब तक बहुत देर हो जाएगी और यह एक विकट महामारी का रूप ले चुकी होगी। इस संकट से निपटने के लिए इसके गहरे निहितार्थ पर विचार करने की जरूरत है। कोविड-19 एक व्यापक पारिस्थितिकी संकट का लक्षण है जिससे मानव अस्तित्व के लिए खतरा है। इसके कई कारण हैं। जैव विविधता की कीमत पर प्रजातियों के मानकीकरण पर आधारित कृषि और पशुपालन का औद्योगीकरण बढ़ता जा रहा है। वन्य प्राणियों का प्राकृतिक पर्यावास सिकुड़ता जा रहा है जिससे वे इंसानी बस्तियों में आ रहे हैं। साथ ही इंसानों का अनजाने में ही सही, ऐसे जीवों के संपर्क हो रहा है जिनसे बचने में लिए उनके शरीर में प्रतिरोधक क्षमता नहीं है। इन्हीं सबका अपरिहार्य नतीजा हमारे सामने कोविड-19 के रूप में मौजूद है।

शहरों में आपको लूटपाट करने वाले बंदरों की टोलियां दिखाई देती हैं। तेंदुए और हाथी अक्सर गांवों और शहरी इलाकों में घुस आते हैं क्योंकि जंगलों को उजाड़ा जा रहा है। भारी मात्रा में उत्पादन की औद्योगिक तकनीकों के कारण यह स्थिति आ गई है कि बड़ी संख्या में मुर्गियों और पशुओं को तंग जगहों पर रखा जाता है। इस तरह अगर एक जानवर को भी संक्रमण होगा तो वह बहुत तेजी से फैलेगा। स्वाइन फ्लू और एवियन फ्लू इसके उदाहरण हैं। सूअरों और मुर्गियों से यह बीमारी फिर इंसानों में आती है। इस तरह के जोखिम को कम करने के लिए जानवरों को नियमित रूप से एंटीबायोटिक्स दिया जाता है। यह एंटीबायोटिक्स फिर खाद्य शृंखला में आ जाता है और इंसानी स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर डालता है। कृषि और पशुपालन के औद्योगीकरण ने भले ही खाद्य सुरक्षा को बढ़ाया है लेकिन यह स्वास्थ्य सुरक्षा में एक नकारात्मक फीडबैक लूप बनाता है।

सच्चाई यह है कि आज इंसान को कई मोर्चों पर संकट का सामना करना पड़ रहा है जैसे जलवायु परिवर्तन, पर्यावरणीय क्षरण, पानी की कमी, खाद्य एवं ऊर्जा सुरक्षा और सामाजिक तथा आर्थिक असमानता शामिल है। ये सभी संकट एकदूसरे से गहरे जुड़े हुए हैं। कभी-कभी पारस्परिक रूप से एकदूसरे को मजबूत करते हैं और अभी एकदूसरे का प्रभाव कम करते हैं। ये हमारी जीवनशैली, मूल्यों, अतीत की हमारी समझ और भविष्य की आकांक्षाओं से जुड़ी गहरी सभ्यतागत खामियों के लक्षण हैं। हर संकट को अलग मानकर उससे निपटने की योजना काम नहीं करेगी क्योंकि फीडबैक लूप के जरिये उसका दायरा बहुत व्यापक है। कोविड-19 जैसा संकट हमारे ग्रह की पारिस्थितिकी का एक हिस्सा हो सकता है लेकिन संभव है कि इसका संबंध दूसरे क्षेत्रों में हो रही घटनाओं से हो सकता है। हालांकि इसका असर तुरंत देखने को नहीं मिल सकता है। यहां एक अंतरनिर्भर आकस्मिक शृंखला काम कर रही थी। कोविड-19 विषाणु अमूमन जंगल में रहने वाले जीवों में रहता है। इस मामले में यह जंगली चमगादड़ से आया है। ये चमगादड़ चीन में वुहान के खाद्य बाजार में रखे गए जानवरों के संपर्क में आया जिससे इनके प्रसार का खतरा बढ़ गया।

इन जानवरों को औद्योगिक रूप से तैयार किया गया था। खाद्य सुरक्षा बढ़ाने के लिए दूसरे क्षेत्रों पर परिणाम की परवाह किए बिना विकसित की गई इन प्रक्रियाओं में यह जोखिम अंतर्निहित है। चुनौतियों को व्यापक परिपेक्ष्य में नहीं देख पाने की हमारी कमजोरी मौजूदा ज्ञान व्यवस्थाओं में अंतरनिहित है जो स्पेशलाइजेशन के बढऩे और व्यापक परिदृश्य पर जोर देने से लगातार बढ़ रहा है। इसकी बड़ी तस्वीर पृथ्वी की नाजुक पारिस्थितिकी को साथ बांधने वाली असंख्य कडिय़ों की जानकारी है। पारिस्थितिकी के एक हिस्से में छोटी सी हलचल दूसरे हिस्सों में व्यापक तबाही ला सकती है। लेकिन यह सच्चाई तेजी से अस्पष्ट हो गई है और सामूहिक अंधेपन के आवेश में इसे नकारा जा रहा है। इसका कारण खोजना मुश्किल नहीं है। इस सच्चाई को स्वीकार करने का मतलब होगा कि हमें अपनी जीवनशैली में बदलाव करना होगा, अपने मूल्यों को बदलना होगा और इंसानियत को प्रकृति से जोडऩा होगा।

मानव प्रकृति है, न कि मानव प्रकृति के खिलाफ है जो कि औद्योगिक दौर का मूलमंत्र रहा है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरसरकारी समिति की रिपोर्ट में पेरिस समझौते में शामिल आकांक्षी लक्ष्यों के प्रभावों की समीक्षा की गई है। इस समझौते में धरती के तापमान में वृद्धि को औद्योगिक क्रांति की शुरुआत की तुलना में केवल 1.5 डिग्री सेंटीग्रेड रखने की बात कही गई है। रिपोर्ट में कहा गया है कि हम पहले ही 1.5 डिग्री की सीमा पर पहुंचने के कगार पर हैं और जलवायु उथलपुथल के लिए इतना ही काफी है। रिपोर्ट में कहा गया है कि धरती को बढ़ते तापमान से बचाने के लिए न केवल वैश्विक अर्थव्यवस्था में बल्कि समाज में भी कायाकल्प की जरूरत होगी। सभ्यतागत प्रतिक्रिया को प्रभावित किए बिना सामाजिक बदलाव संभव नहीं है।

हम प्रौद्योगिकी के दौर में रह रहे हैं। यह एक व्यापक धारणा है कि प्रौद्योगिकी हमारे समक्ष मौजूद संकटों का कुछ न कुछ समाधान ढूंढ लेगी और इसके लिए हमें अपनी जीवनशैली में बदलाव नहीं करना पड़ेगा। कृत्रिम मेधा और मशीन लर्निंग की नई दुनिया आने को तैयार है। क्वांटम कंप्यूटिंग और जेनिटिक इंजीनियरिंग में चमत्कार हो रहे हैं। भविष्य की प्रौद्योगिकी प्रगति के नतीजे इंसान पर बहुत हावी हो सकते हैं। यह हो सकता है। लेकिन क्या हमारा ग्रह और पृथ्वी पर जीवन प्रौद्योगिकी के इस चमत्कार को देखने के लिए जिंदा बचेंगे? उदाहरण के लिए क्या यह संभव नहीं है कि कोई विषाणु उसका टीका विकसित होने से पहले ही दुनिया की आबादी को खत्म कर दे? शायद कोविड-19 पारिस्थितिकी आपदा के लिए खतरे की घंटी है जिस पर हम ध्यान नहीं दे रहे हैं।

पारिस्थिकीय संकट से निपटने के लिए इंसान की योजना क्या होनी चाहिए? हमें प्रकृति को एक जीवित स्रोत की तरह देखना चाहिए और उसका उतना दोहन नहीं करना चाहिए कि उसका अस्तित्व की खतरे में पड़ जाए। पृथ्वी पर सभी जीव जंतुओं का अस्तित्व बनाए रखने के लिए जैवविविधता बुनियादी जरूरत है और इसका हर हाल में संरक्षण होना चाहिए। हम जिस तरह एकदूसरे को प्रभावित करने वाली चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, उसके लिए वैश्विक स्तर पर एक व्यापक और समन्वित योजना की जरूरत है। अधिकारप्राप्त अंतरराष्ट्रीय संचालन संस्थाओं के जरिये चलने वाली बहुस्तरीय प्रक्रियाओं का कोई विकल्प नहीं है। सबसे अहम बात यह है कि हमें समृद्धि की एक नई परिभाषा की जरूरत है जो सांस लेने के लिए शुद्ध हवा, पीने के लिए ताजा पानी और घूमने के लिए हरी भरी पृथ्वी को अहमियत दे।

THE HINDU

Date:12-03-20

For a level playing field

ECI's plans to strengthen the electoral process are welcome, but some require scrutiny

Editorial

Even as electoral democracy has taken strong root in India, there is no gainsaying the fact that some unhealthy patterns have emerged. While voter electoral participation has remained robust, with the poor voting in large numbers, candidates and winners in Assembly and Lok Sabha polls have largely been from affluent sections — some even with several criminal cases against them. With elections becoming expensive, most parties have sought to field richer candidates irrespective of their merit in representing public interest. Current campaign finance regulations by the Election Commission of India that seek transparency on expenses by party and candidate, and prescribe limits on a candidate's expenditure, have not been sufficient deterrents. Poll results have tended to be a function of either party or leader preference by the voter rather than a statement on the capability of the candidate. In many cases, capable candidates stand no chance against the money power of more affluent candidates. News that the ECI is considering tightening ways to cap the expenditure of parties is therefore quite welcome, as it should provide a more level playing field. But even this can be meaningful only if there is more transparency in campaign finance which suggests that the electoral bonds system, as it is in place now, is untenable. The ECI has also suggested bringing social media and print media under the "silent period" ambit after campaigning ends. Regulating social media will be difficult and it remains to be seen how the ECI will implement this.

The ECI's plans to introduce new "safe and secure" voting methods, however, need thorough scrutiny. The use now of the EVM as a standalone, one-time programmable chip-based system, along with administrative safeguards renders it a safe mechanism that is not vulnerable to hacking. Any other "online" form of voting that is based on networked systems should be avoided. The idea of an Aadhaar-linked remote voting system that is sought to be built as a prototype could be problematic considering how the unique identity card has excluded genuine beneficiaries when used in welfare schemes, not to mention the inherent vulnerabilities in its recognition mechanisms. Two key measures are missing from

the recommendations — the need for more teeth for the ECI in its fight against "vote buying" and hate speech. Increasingly, parties have resorted to bribing voters in the form of money and other commodities in return for votes, and while the ECI has tried to warn outfits or in some cases postponed polls, these have not deterred them. In times when hate speech is used during elections, the ECI has only managed to rap the offending candidates or party spokespersons on the knuckles but stricter norms including disqualification of the candidate would be needed for true deterrence.

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date:12-03-20

Abuse of power

Allahabad HC ruling against public shaming of anti-CAA protesters is enormously welcome. UP government must heed it.

Editorial

The Uttar Pradesh government's recent move to put up hoardings and banners with photographs and personal data of the citizens who had protested against the new citizenship law compromised their privacy and reeked of vindictiveness. It imperiled the safety of protesters, who have been vilified by top functionaries of the government as "anti-national". Hence, it is reassuring that the Allahabad High Court took suo motu cognisance and called the government's move illegal. The government has decided to challenge the order of the two-member bench of the HC, led by Chief Justice Govind Mathur, in the Supreme Court. The insistence of the Adityanath administration in persisting with its unlawful move underlines its intolerance of protest and dissent.

The new citizenship act (CAA) has been contested by large sections of the citizenry on the legitimate ground that it discriminates against the Muslim minority. Protests have been organised across the country against the CAA and the proposed National Register of Citizens. Many non-BJP governments have responded positively to these mostly peaceful mobilisations, which invoke the Indian Constitution and feature the national flag and anthem. In contrast, the UP government has been visibly and viciously hostile to the anti-CAA protests. The state saw large-scale violence last December and a brutal police crackdown — in which at least 18 people died — and hundreds of people were arrested on charges ranging from inciting violence and arson to sedition. Many were released on bail since the police could not produce the evidence in court to corroborate its claims. The administration has been indiscriminately issuing notices to persons suspected of vandalism during the anti-CAA protests and seeking compensation for the loss of public property. It is in this toxic environment that the government has sought to publicly name and shame the dissenters — among the 50-plus persons highlighted in hoardings are retired IPS officer S R Darapuri, civil rights activist Mohammed Shoaib, and theatre personality Deepak Kabir.

In a state that has witnessed public lynchings and where the police is accused of violating due process by encounters, the government's act of branding people in this manner is fraught with danger. As the

Allahabad HC said, the measure "reflects colourable exercise of powers by the Executive", "is nothing but an unwarranted interference in privacy of people", and, hence, "in violation of Article 21 of the Constitution". The government must listen to the HC's censure and retrace its steps.